IMPACT FACTOR 7.50 (SJIAI)

बिहार शोध समागम
BIHAR SHODH SAMAAGAM

Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 4, Issue 3 July-September, 2026
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
https://doi.org/10.5281/zenodo.22861934

ISSN : 3048-6971

एक नए प्रांत के रूप में बिहार का गठन कैसे हुआ?

चेतन कुमार
शोधार्थी, इतिहास विभाग
स्कॉलर नंबर: 284181
फोनिक्स यूनिवर्सिटी , रुड़की, उत्तराखंड

टिप्पणी : यह शोध-पत्र बंगाल प्रेसिडेंसी से बिहार के पृथक्करण, 1911 की घोषणा, 22 मार्च 1912 को बिहार-उड़ीसा प्रांत के गठन, 1936 में उड़ीसा के पृथक्करण और बिहार की प्रांतीय पहचान के विकास का ऐतिहासिक अध्ययन है।

विषय : बिहार को बंगाल प्रेसिडेंसी से अलग कर पृथक प्रांतीय प्रशासनिक इकाई बनाने की ऐतिहासिक प्रक्रिया का विश्लेषण। इसमें प्रशासनिक, आर्थिक, शैक्षिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक कारकों को एक साथ रखकर देखा गया है।

सारांश

बिहार का आधुनिक प्रांतीय स्वरूप एक लंबी ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम था। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से बिहार बंगाल प्रेसिडेंसी के अधीन रहा और उच्च प्रशासनिक निर्णयों का केंद्र कलकत्ता था। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी के आरंभ में शिक्षित मध्यवर्ग, वकीलों, पत्रकारों और सार्वजनिक संस्थाओं ने प्रशासनिक उपेक्षा, प्रतिनिधित्व, शिक्षा, रोजगार और क्षेत्रीय पहचान के आधार पर पृथक प्रांत की माँग को स्वर दिया। 25 अगस्त 1911 को भारत सरकार ने बिहार-उड़ीसा के लिए अलग प्रशासन की दिशा में प्रस्ताव भेजा और 12 दिसंबर 1911 के दिल्ली दरबार में बंगाल से पृथक नए प्रांत की घोषणा हुई। 22 मार्च 1912 को बिहार और उड़ीसा प्रांत अस्तित्व में आया और पटना उसका मुख्यालय बना। 1936 में उड़ीसा अलग प्रांत बना, जिसके बाद बिहार स्वतंत्र प्रांतीय इकाई के रूप में विकसित हुआ।

प्रमुख शब्द : बिहार; बंगाल प्रेसिडेंसी; बिहार-उड़ीसा प्रांत; 1912; पटना; प्रांतीयता; औपनिवेशिक प्रशासन; क्षेत्रीय पहचान; प्रशासनिक पुनर्गठन

इस पृष्ठ के विषय को व्यापक संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि बिहार की प्रांतीय पहचान किसी एक दिन में निर्मित नहीं हुई। प्रशासनिक पुनर्गठन ने पहले से मौजूद ऐतिहासिक स्मृतियों, आर्थिक हितों और सार्वजनिक चेतना को संस्थागत रूप दिया। इस प्रक्रिया में स्थानीय समाज ने औपनिवेशिक शासन की भाषा और संस्थाओं का उपयोग करते हुए अपनी माँगें रखीं। इसलिए बिहार के गठन का इतिहास ऊपर से थोपा गया प्रशासनिक निर्णय और नीचे से विकसित क्षेत्रीय चेतना—दोनों का संयुक्त इतिहास है।

2. प्रस्तावना

आधुनिक बिहार के गठन का इतिहास केवल 22 मार्च 1912 की प्रशासनिक घोषणा तक सीमित नहीं है। इसके पीछे अठारहवीं शताब्दी में कंपनी शासन का विस्तार, बंगाल प्रेसिडेंसी की विशाल प्रशासनिक संरचना, राजस्व व्यवस्था, कलकत्ता-केंद्रित शासन, शिक्षा के प्रसार और नए सार्वजनिक मध्यवर्ग का उदय था। बिहार राज्य अभिलेखागार अपने संस्थागत इतिहास को 1912 में पृथक बिहार-उड़ीसा प्रांत के गठन से जोड़ता है। इससे स्पष्ट है कि प्रांतीय गठन ने प्रशासनिक अभिलेख और संस्थाओं के विकास को भी नई दिशा दी (Bihar State Archives, n.d.).

बिहार ऐतिहासिक रूप से मगध, अंग, मिथिला और वज्जि जैसे क्षेत्रों से जुड़ा रहा। पाटलिपुत्र की प्राचीन प्रतिष्ठा, नालंदा और विक्रमशिला की बौद्धिक परंपरा तथा पटना की व्यापारिक भूमिका ने क्षेत्र की दीर्घ सांस्कृतिक स्मृति बनाई। औपनिवेशिक शासन ने इस विविध भूभाग को बंगाल-केंद्रित प्रशासन में जोड़ा। आधुनिक प्रांतीयता ने इसी पुरानी ऐतिहासिक स्मृति को नए प्रशासनिक ढाँचे से जोड़ा।

बंगाल प्रेसिडेंसी के विशाल आकार के कारण बिहार से जुड़े अनेक महत्वपूर्ण निर्णय कलकत्ता से होते थे। स्थानीय शिक्षित वर्ग को धीरे-धीरे यह अनुभव हुआ कि प्रशासनिक दूरी के कारण बिहार की आवश्यकताओं को पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिल रहा है। पृथक प्रांत की माँग इसलिए केवल सांस्कृतिक भावुकता नहीं थी; इसमें प्रशासनिक सुविधा, रोजगार, शिक्षा, न्याय और सार्वजनिक प्रतिनिधित्व के ठोस प्रश्न शामिल थे।

इस शोध का उद्देश्य यह समझना है कि बिहार को अलग प्रांत बनाने की माँग कैसे विकसित हुई, ब्रिटिश सरकार ने इसे कब और क्यों स्वीकार किया, 1912 के बाद नई संस्थाएँ कैसे बनीं और 1936 में उड़ीसा के अलग होने के बाद बिहार की प्रांतीय पहचान किस प्रकार स्थिर हुई।

इस परिवर्तन का महत्व केवल तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहा। पृथक प्रांत बनने के बाद स्थानीय नेतृत्व को विधान, प्रशासन और सार्वजनिक नीति के प्रश्नों पर काम करने का अवसर मिला। यही अनुभव आगे राष्ट्रीय आंदोलन और स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक शासन में उपयोगी हुआ। इस दृष्टि से 1912 की घटना को आधुनिक राजनीतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया का प्रारंभिक चरण भी माना जा सकता है।

औपनिवेशिक पुनर्गठन की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण थीं। नई संस्थाएँ बनीं, लेकिन निर्णय लेने की अंतिम शक्ति लंबे समय तक ब्रिटिश अधिकारियों के पास रही। इसलिए प्रांतीय गठन को स्वतंत्रता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इसकी वास्तविक ऐतिहासिक भूमिका यह थी कि इसने भारतीय नेताओं को प्रशासनिक संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों जगह राजनीतिक संघर्ष के लिए नया क्षेत्र प्रदान किया।

3. शोध के उद्देश्य, प्रश्न एवं पद्धति

शोध का पहला उद्देश्य बिहार के बंगाल प्रेसिडेंसी में समावेशन की पृष्ठभूमि को स्पष्ट करना है। दूसरा उद्देश्य पृथक बिहार की माँग के प्रशासनिक, आर्थिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक आधारों की पहचान करना है। तीसरा उद्देश्य 1911 की घोषणा से 22 मार्च 1912 के गठन तक की घटनाओं का कालक्रम निर्धारित करना है। चौथा उद्देश्य 1912 के बाद विधान परिषद, सचिवालय, न्यायिक संस्थाओं और राजधानी पटना के विकास का अध्ययन करना है। पाँचवाँ उद्देश्य 1936 के बाद बिहार की स्वतंत्र प्रांतीय पहचान का मूल्यांकन करना है।

मुख्य शोध प्रश्न हैं: क्या पृथक बिहार की माँग मुख्यतः प्रशासनिक थी या क्षेत्रीय पहचान भी उतनी ही महत्वपूर्ण थी? स्थानीय शिक्षित वर्ग और सार्वजनिक संस्थाओं ने इसे कैसे संगठित किया? ब्रिटिश सरकार के प्रशासनिक हित क्या थे? 1912 के बाद प्रांतीय संस्थाओं ने राजनीति को कैसे बदला?

अध्ययन ऐतिहासिक-विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। प्राथमिक स्रोतों के रूप में बिहार विधान परिषद और विधानसभा के आधिकारिक इतिहास, बिहार राज्य अभिलेखागार, औपनिवेशिक प्रशासनिक रिपोर्टें, वैधानिक अधिनियम और जनगणना दस्तावेज उपयोगी हैं। द्वितीयक स्रोतों में आधुनिक भारत और बिहार के इतिहास पर प्रकाशित पुस्तकें शामिल हैं। स्रोत-आलोचना के माध्यम से लोकप्रिय दावों को प्रशासनिक और समकालीन प्रमाणों से मिलाया गया है।

विशेष सावधानी यह है कि 1912 का प्रांत वर्तमान बिहार की सीमाओं वाला राज्य नहीं था। वह बिहार और उड़ीसा का संयुक्त प्रांत था। 1936 में उड़ीसा अलग प्रांत बना। अतः 1912 को बिहार के आधुनिक प्रशासनिक इतिहास का आरंभिक निर्णायक चरण और 1936 को उसकी स्वतंत्र प्रांतीय स्थिति का अगला चरण माना जाना चाहिए।

स्रोतों की तुलना से यह भी स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय माँगों के पीछे अलग-अलग सामाजिक हित थे। शिक्षित मध्यवर्ग प्रतिनिधित्व चाहता था, व्यापारी वर्ग प्रशासनिक सुविधा और बाजार की स्थिरता में रुचि रखता था, जबकि ग्रामीण समाज की समस्याएँ भूमि और राजस्व से जुड़ी थीं। इन सभी हितों को एक साझा 'बिहार' की राजनीतिक भाषा में जोड़ना आंदोलन की प्रमुख उपलब्धि थी।

दीर्घकालिक दृष्टि से बिहार का गठन राज्य-निर्माण की एक सतत प्रक्रिया का आरंभ था। 1912 के बाद राजधानी, सचिवालय, न्यायालय और विधान परिषद विकसित हुए; 1919 में प्रांतीय शासन का नया ढाँचा आया; 1936 में उड़ीसा अलग हुआ और 1937 में उत्तरदायी शासन का अनुभव मिला। इन सभी चरणों को जोड़कर ही आधुनिक बिहार की राजनीतिक संस्थाओं का विकास समझा जा सकता है।

4. प्राचीन एवं मध्यकालीन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

आधुनिक प्रांत बनने से पहले बिहार क्षेत्र का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। मगध ने प्राचीन भारतीय राजनीति में केंद्रीय स्थान प्राप्त किया और पाटलिपुत्र मौर्य तथा गुप्त काल में साम्राज्यवादी शासन का प्रमुख केंद्र रहा। वैशाली की गणतांत्रिक परंपरा, नालंदा का बौद्धिक महत्व और विक्रमशिला का शिक्षा-केंद्र के रूप में विकास इस क्षेत्र की दीर्घ राजनीतिक और सांस्कृतिक स्मृति का हिस्सा हैं।

मध्यकाल में बिहार विभिन्न राजनीतिक शक्तियों के अधीन रहा। मुगल काल में पटना प्रशासन और व्यापार का महत्वपूर्ण केंद्र बना। गंगा के जलमार्ग और स्थलमार्गों ने इसे पूर्वी भारत के आर्थिक नेटवर्क से जोड़ा। अफीम, नमक, अनाज, रेशम और अन्य वस्तुओं के व्यापार में पटना की भूमिका ने बाद के औपनिवेशिक नगर विकास की नींव रखी।

यह ऐतिहासिक विरासत उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दी में क्षेत्रीय पहचान के लिए उपयोगी बनी। आधुनिक शिक्षित वर्ग ने प्राचीन मगध, पाटलिपुत्र और नालंदा की स्मृतियों को आधुनिक बिहार की प्रतिष्ठा से जोड़ा। इससे यह भावना विकसित हुई कि बिहार की अपनी ऐतिहासिक पहचान है जिसे प्रशासनिक रूप से भी मान्यता मिलनी चाहिए।

हालाँकि प्राचीन पहचान और आधुनिक प्रांत को एक ही चीज मानना गलत होगा। आधुनिक बिहार की सीमाएँ औपनिवेशिक प्रशासन और बाद के पुनर्गठन से बनीं। इसलिए ऐतिहासिक विरासत ने राजनीतिक भाषा को आधार दिया, लेकिन 1912 का प्रांतीय गठन आधुनिक प्रशासनिक निर्णय था।

औपनिवेशिक पुनर्गठन की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण थीं। नई संस्थाएँ बनीं, लेकिन निर्णय लेने की अंतिम शक्ति लंबे समय तक ब्रिटिश अधिकारियों के पास रही। इसलिए प्रांतीय गठन को स्वतंत्रता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इसकी वास्तविक ऐतिहासिक भूमिका यह थी कि इसने भारतीय नेताओं को प्रशासनिक संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों जगह राजनीतिक संघर्ष के लिए नया क्षेत्र प्रदान किया।

इस पृष्ठ के विषय को व्यापक संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि बिहार की प्रांतीय पहचान किसी एक दिन में निर्मित नहीं हुई। प्रशासनिक पुनर्गठन ने पहले से मौजूद ऐतिहासिक स्मृतियों, आर्थिक हितों और सार्वजनिक चेतना को संस्थागत रूप दिया। इस प्रक्रिया में स्थानीय समाज ने औपनिवेशिक शासन की भाषा और संस्थाओं का उपयोग करते हुए अपनी माँगें रखीं। इसलिए बिहार के गठन का इतिहास ऊपर से थोपा गया प्रशासनिक निर्णय और नीचे से विकसित क्षेत्रीय चेतना—दोनों का संयुक्त इतिहास है।

5. बक्सर के बाद कंपनी शासन और बिहार

1764 के बक्सर युद्ध और 1765 में दीवानी अधिकार प्राप्त करने के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी का राजस्व नियंत्रण बिहार में मजबूत हुआ। बिहार को बंगाल के व्यापक राजस्व और प्रशासनिक ढाँचे में रखा गया। कलकत्ता कंपनी शासन का प्रमुख केंद्र था और बिहार का उच्च प्रशासन उसी व्यवस्था से संचालित होता था।

स्थायी बंदोबस्त 1793 ने भू-राजस्व संबंधों को नया रूप दिया। जमींदारों और किसानों के संबंध, राजस्व की निश्चित माँग तथा औपनिवेशिक न्याय व्यवस्था ने ग्रामीण समाज को प्रभावित किया। बाद के किसान आंदोलनों की सामाजिक पृष्ठभूमि में इन व्यवस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही।

पटना और अन्य शहरों में औपनिवेशिक कार्यालय बढ़े, परंतु उच्च प्रशासनिक शक्ति कलकत्ता में रही। प्रशासनिक दूरी के कारण स्थानीय वर्ग को यह अनुभव हुआ कि क्षेत्रीय आवश्यकताओं के लिए अलग संस्थागत ढाँचा उपयोगी होगा।

कंपनी शासन की सबसे महत्वपूर्ण विरासत आधुनिक प्रशासनिक संस्थाओं का विकास था। न्यायालय, राजस्व कार्यालय, शिक्षा संस्थान और संचार व्यवस्था ने क्षेत्र को नए ढाँचे में जोड़ा। यही संस्थाएँ बाद में क्षेत्रीय राजनीतिक माँगों को व्यक्त करने का माध्यम भी बनीं।

दीर्घकालिक दृष्टि से बिहार का गठन राज्य-निर्माण की एक सतत प्रक्रिया का आरंभ था। 1912 के बाद राजधानी, सचिवालय, न्यायालय और विधान परिषद विकसित हुए; 1919 में प्रांतीय शासन का नया ढाँचा आया; 1936 में उड़ीसा अलग हुआ और 1937 में उत्तरदायी शासन का अनुभव मिला। इन सभी चरणों को जोड़कर ही आधुनिक बिहार की राजनीतिक संस्थाओं का विकास समझा जा सकता है।

इस परिवर्तन का महत्व केवल तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहा। पृथक प्रांत बनने के बाद स्थानीय नेतृत्व को विधान, प्रशासन और सार्वजनिक नीति के प्रश्नों पर काम करने का अवसर मिला। यही अनुभव आगे राष्ट्रीय आंदोलन और स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक शासन में उपयोगी हुआ। इस दृष्टि से 1912 की घटना को आधुनिक राजनीतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया का प्रारंभिक चरण भी माना जा सकता है।

6. बंगाल प्रेसिडेंसी की प्रशासनिक संरचना

बंगाल प्रेसिडेंसी अत्यंत विशाल प्रशासनिक इकाई थी। बिहार की समस्याएँ और आवश्यकताएँ इसी व्यापक ढाँचे के भीतर देखी जाती थीं। बिहार विधानसभा के आधिकारिक इतिहास में भी दर्ज है कि ईस्ट इंडिया कंपनी के समय बिहार बंगाल प्रेसिडेंसी का हिस्सा था और 1911–12 के पुनर्गठन से यह स्थिति बदली (Bihar Legislative Assembly, n.d.).

प्रशासनिक दूरी का प्रभाव न्याय, शिक्षा, सरकारी रोजगार और सार्वजनिक प्रतिनिधित्व पर पड़ता था। पटना, गया, भागलपुर और मुजफ्फरपुर जैसे केंद्रों में विकसित शिक्षित वर्ग ने इन प्रश्नों को सार्वजनिक बहस का विषय बनाया।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में प्रेस और सार्वजनिक सभाओं ने बिहार की क्षेत्रीय समस्याओं को राजनीतिक भाषा दी। समाचार-पत्रों में शिक्षा, रोजगार, प्रशासन और सांस्कृतिक पहचान पर चर्चा होने लगी। बिहार राज्य अभिलेखागार में 1912 के आसपास के राजनीतिक, छात्र और प्रेस संबंधी अभिलेख उपलब्ध हैं (Bihar State Archives, n.d.).

इसलिए पृथक बिहार की माँग किसी एक घटना का परिणाम नहीं थी। यह प्रशासनिक अनुभव, सार्वजनिक विमर्श और क्षेत्रीय चेतना की संयुक्त प्रक्रिया थी। 1912 का निर्णय इस प्रक्रिया का औपनिवेशिक प्रशासनिक निष्कर्ष था।

इस पृष्ठ के विषय को व्यापक संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि बिहार की प्रांतीय पहचान किसी एक दिन में निर्मित नहीं हुई। प्रशासनिक पुनर्गठन ने पहले से मौजूद ऐतिहासिक स्मृतियों, आर्थिक हितों और सार्वजनिक चेतना को संस्थागत रूप दिया। इस प्रक्रिया में स्थानीय समाज ने औपनिवेशिक शासन की भाषा और संस्थाओं का उपयोग करते हुए अपनी माँगें रखीं। इसलिए बिहार के गठन का इतिहास ऊपर से थोपा गया प्रशासनिक निर्णय और नीचे से विकसित क्षेत्रीय चेतना—दोनों का संयुक्त इतिहास है।

स्रोतों की तुलना से यह भी स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय माँगों के पीछे अलग-अलग सामाजिक हित थे। शिक्षित मध्यवर्ग प्रतिनिधित्व चाहता था, व्यापारी वर्ग प्रशासनिक सुविधा और बाजार की स्थिरता में रुचि रखता था, जबकि ग्रामीण समाज की समस्याएँ भूमि और राजस्व से जुड़ी थीं। इन सभी हितों को एक साझा 'बिहार' की राजनीतिक भाषा में जोड़ना आंदोलन की प्रमुख उपलब्धि थी।

7. आधुनिक शिक्षा और नए मध्यवर्ग का उदय

आधुनिक शिक्षा ने पृथक बिहार की माँग को वैचारिक आधार दिया। पटना कॉलेज और बिहार नेशनल कॉलेज जैसे संस्थानों ने ऐसे युवाओं और पेशेवरों को तैयार किया जो कानून, प्रशासन, पत्रकारिता और राजनीति की भाषा समझते थे।

शिक्षित मध्यवर्ग ने दोहरा कार्य किया। उसने स्थानीय समस्याओं को सार्वजनिक प्रश्न बनाया और ब्रिटिश प्रशासन के सामने संवैधानिक तर्क प्रस्तुत किए। पृथक प्रांत को प्रशासनिक सुविधा, शिक्षा, रोजगार और प्रतिनिधित्व से जोड़ा गया।

यह वर्ग एकरूप नहीं था। कुछ लोग प्रशासनिक विकेंद्रीकरण चाहते थे, कुछ रोजगार के अवसरों की वृद्धि और कुछ क्षेत्रीय सम्मान को प्राथमिकता देते थे। इसलिए बिहारियत कई हितों का संगम थी।

छात्र और शिक्षक भी सार्वजनिक गतिविधियों में शामिल हुए। राज्य अभिलेखागार के संग्रह में 1912 के आसपास छात्र संगठनों और राजनीतिक गतिविधियों का उल्लेख इस परिवर्तन का संकेत देता है। आधुनिक शिक्षा ने राजनीतिक चेतना को संस्थागत मंच दिया (Bihar State Archives, n.d.).

इस प्रकार शिक्षा ने पृथक बिहार की माँग को लिखित याचिकाओं, सार्वजनिक सभाओं, समाचार-पत्रों और संगठनों के माध्यम से व्यक्त करने की क्षमता प्रदान की।

इस परिवर्तन का महत्व केवल तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहा। पृथक प्रांत बनने के बाद स्थानीय नेतृत्व को विधान, प्रशासन और सार्वजनिक नीति के प्रश्नों पर काम करने का अवसर मिला। यही अनुभव आगे राष्ट्रीय आंदोलन और स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक शासन में उपयोगी हुआ। इस दृष्टि से 1912 की घटना को आधुनिक राजनीतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया का प्रारंभिक चरण भी माना जा सकता है।

औपनिवेशिक पुनर्गठन की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण थीं। नई संस्थाएँ बनीं, लेकिन निर्णय लेने की अंतिम शक्ति लंबे समय तक ब्रिटिश अधिकारियों के पास रही। इसलिए प्रांतीय गठन को स्वतंत्रता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इसकी वास्तविक ऐतिहासिक भूमिका यह थी कि इसने भारतीय नेताओं को प्रशासनिक संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों जगह राजनीतिक संघर्ष के लिए नया क्षेत्र प्रदान किया।

8. पृथक बिहार की माँग का उदय

पृथक बिहार की माँग धीरे-धीरे सार्वजनिक जीवन में उभरी। इसका आधार प्रशासनिक दूरी, क्षेत्रीय पहचान और प्रतिनिधित्व की आवश्यकता थी। शिक्षित वर्ग ने बिहार के इतिहास, आर्थिक हित और सामाजिक जीवन को साझा प्रांतीय पहचान के रूप में प्रस्तुत करना शुरू किया।

बिहार के वकील, शिक्षक, पत्रकार, जमींदार और सार्वजनिक नेता इस विमर्श में शामिल हुए। उनके उद्देश्य अलग हो सकते थे, लेकिन स्थानीय प्रशासन में अधिक प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व की माँग सामान्य थी।

ब्रिटिश सरकार ने इस माँग को केवल स्थानीय आग्रह के रूप में नहीं देखा। 1905 के बंगाल विभाजन, स्वदेशी आंदोलन और 1911 के व्यापक पुनर्गठन ने भी निर्णय को प्रभावित किया। इसलिए बिहार का पृथक्करण बंगाल पुनर्गठन की साम्राज्यवादी नीति का भी हिस्सा था।

बिहार विधान परिषद के आधिकारिक इतिहास के अनुसार 25 अगस्त 1911 को भारत सरकार ने भारत सचिव को बिहार-उड़ीसा के लिए अलग प्रशासन, विधान परिषद और पटना को राजधानी बनाने की दिशा में प्रस्ताव भेजा। 1 नवंबर 1911 को सकारात्मक उत्तर मिला (Bihar Legislative Council, n.d.).

यह प्रक्रिया स्थानीय माँग को औपचारिक सरकारी निर्णय में बदलने का निर्णायक चरण थी।

स्रोतों की तुलना से यह भी स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय माँगों के पीछे अलग-अलग सामाजिक हित थे। शिक्षित मध्यवर्ग प्रतिनिधित्व चाहता था, व्यापारी वर्ग प्रशासनिक सुविधा और बाजार की स्थिरता में रुचि रखता था, जबकि ग्रामीण समाज की समस्याएँ भूमि और राजस्व से जुड़ी थीं। इन सभी हितों को एक साझा 'बिहार' की राजनीतिक भाषा में जोड़ना आंदोलन की प्रमुख उपलब्धि थी।

दीर्घकालिक दृष्टि से बिहार का गठन राज्य-निर्माण की एक सतत प्रक्रिया का आरंभ था। 1912 के बाद राजधानी, सचिवालय, न्यायालय और विधान परिषद विकसित हुए; 1919 में प्रांतीय शासन का नया ढाँचा आया; 1936 में उड़ीसा अलग हुआ और 1937 में उत्तरदायी शासन का अनुभव मिला। इन सभी चरणों को जोड़कर ही आधुनिक बिहार की राजनीतिक संस्थाओं का विकास समझा जा सकता है।

9. बिहारियत और क्षेत्रीय पहचान

क्षेत्रीय पहचान इतिहास, भाषा, संस्कृति, आर्थिक हित और राजनीतिक अनुभव से बनती है। बिहार के मामले में पृथक प्रांत की माँग ने इन तत्वों को एक साझा राजनीतिक भाषा में जोड़ा। बिहार केवल भौगोलिक नाम नहीं रहा; वह प्रशासनिक अधिकार और प्रतिनिधित्व की माँग का प्रतीक बनने लगा।

मगध और पाटलिपुत्र की स्मृति, नालंदा की शिक्षा परंपरा और पटना के व्यापारिक इतिहास को आधुनिक क्षेत्रीय गौरव से जोड़ा गया। अतीत की इन स्मृतियों को आधुनिक राजनीतिक आवश्यकताओं के संदर्भ में पुनर्परिभाषित किया गया।

बिहार सामाजिक और भाषाई रूप से विविध था। मैथिली, भोजपुरी, मगही, अंगिका, उर्दू और हिंदी की परंपराएँ साथ मौजूद थीं। इसलिए बिहारियत को किसी एक भाषा या समुदाय की पहचान नहीं, बल्कि प्रशासनिक क्षेत्र के भीतर साझा राजनीतिक पहचान के रूप में देखना अधिक उचित है।

1912 के बाद प्रांतीय संस्थाओं ने इस पहचान को और मजबूत किया। पटना राजधानी बना, विधान परिषद का गठन हुआ और स्थानीय प्रेस तथा शिक्षा संस्थाओं का विस्तार हुआ। इससे क्षेत्रीय पहचान संस्थागत रूप लेने लगी।

औपनिवेशिक पुनर्गठन की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण थीं। नई संस्थाएँ बनीं, लेकिन निर्णय लेने की अंतिम शक्ति लंबे समय तक ब्रिटिश अधिकारियों के पास रही। इसलिए प्रांतीय गठन को स्वतंत्रता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इसकी वास्तविक ऐतिहासिक भूमिका यह थी कि इसने भारतीय नेताओं को प्रशासनिक संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों जगह राजनीतिक संघर्ष के लिए नया क्षेत्र प्रदान किया।

इस पृष्ठ के विषय को व्यापक संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि बिहार की प्रांतीय पहचान किसी एक दिन में निर्मित नहीं हुई। प्रशासनिक पुनर्गठन ने पहले से मौजूद ऐतिहासिक स्मृतियों, आर्थिक हितों और सार्वजनिक चेतना को संस्थागत रूप दिया। इस प्रक्रिया में स्थानीय समाज ने औपनिवेशिक शासन की भाषा और संस्थाओं का उपयोग करते हुए अपनी माँगें रखीं। इसलिए बिहार के गठन का इतिहास ऊपर से थोपा गया प्रशासनिक निर्णय और नीचे से विकसित क्षेत्रीय चेतना—दोनों का संयुक्त इतिहास है।

10. 1905 का बंगाल विभाजन और 1911 का पुनर्गठन

1905 का बंगाल विभाजन औपनिवेशिक भारत की राजनीति में बड़ा मोड़ था। स्वदेशी और बहिष्कार आंदोलनों ने बंगाल के पुनर्गठन के विरुद्ध व्यापक प्रतिक्रिया पैदा की। 1911 में ब्रिटिश सरकार ने पुनर्गठन की नई नीति अपनाई और इसी प्रक्रिया में बिहार-उड़ीसा को बंगाल से अलग करने का निर्णय आया।

1911 का निर्णय केवल बिहार की स्थानीय माँग का परिणाम नहीं था। ब्रिटिश सरकार बंगाल के राजनीतिक प्रभाव और स्वदेशी आंदोलन की चुनौती का भी सामना कर रही थी। प्रशासनिक पुनर्गठन साम्राज्यवादी नियंत्रण की व्यापक रणनीति का हिस्सा था।

12 दिसंबर 1911 को दिल्ली दरबार में जॉर्ज पंचम ने बिहार और उड़ीसा को बंगाल से अलग करने की घोषणा की और पटना को मुख्यालय बनाया। यह घोषणा बिहार के प्रशासनिक इतिहास का निर्णायक मोड़ थी (Bihar Legislative Assembly, n.d.).

22 मार्च 1912 को नया प्रांत अस्तित्व में आया। सर चार्ल्स स्टुअर्ट बेली प्रथम लेफ्टिनेंट-गवर्नर बने। प्रशासनिक राजधानी और नई संस्थाओं के कारण पटना का महत्व तेजी से बढ़ा।

इस प्रकार 1912 का गठन स्थानीय क्षेत्रीय चेतना और ब्रिटिश साम्राज्य की पुनर्गठन नीति के बीच अंतःक्रिया का परिणाम था।

दीर्घकालिक दृष्टि से बिहार का गठन राज्य-निर्माण की एक सतत प्रक्रिया का आरंभ था। 1912 के बाद राजधानी, सचिवालय, न्यायालय और विधान परिषद विकसित हुए; 1919 में प्रांतीय शासन का नया ढाँचा आया; 1936 में उड़ीसा अलग हुआ और 1937 में उत्तरदायी शासन का अनुभव मिला। इन सभी चरणों को जोड़कर ही आधुनिक बिहार की राजनीतिक संस्थाओं का विकास समझा जा सकता है।

इस परिवर्तन का महत्व केवल तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहा। पृथक प्रांत बनने के बाद स्थानीय नेतृत्व को विधान, प्रशासन और सार्वजनिक नीति के प्रश्नों पर काम करने का अवसर मिला। यही अनुभव आगे राष्ट्रीय आंदोलन और स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक शासन में उपयोगी हुआ। इस दृष्टि से 1912 की घटना को आधुनिक राजनीतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया का प्रारंभिक चरण भी माना जा सकता है।

11. 12 दिसंबर 1911 की घोषणा

12 दिसंबर 1911 की दिल्ली दरबार घोषणा ने पृथक बिहार की माँग को औपचारिक सरकारी निर्णय में बदल दिया। बिहार विधान परिषद के इतिहास में 25 अगस्त के प्रस्ताव से दिसंबर की घोषणा तक की प्रक्रिया दर्ज है (Bihar Legislative Council, n.d.).

पटना को मुख्यालय बनाए जाने से शहर में सचिवालय, विधान परिषद, सरकारी आवास, न्यायिक संस्थाएँ और अन्य विभाग विकसित होने लगे। प्रशासनिक शक्ति का एक भाग कलकत्ता से पटना में आया।

नए प्रांत से स्थानीय शिक्षित वर्ग को प्रशासनिक संस्थाओं में अवसर मिले। यद्यपि औपनिवेशिक शासन में अधिकार सीमित थे, फिर भी विधान परिषद और सचिवालय ने राजनीतिक प्रशिक्षण दिया।

घोषणा का एक महत्वपूर्ण प्रभाव यह था कि बिहार की राजनीति को अपना प्रांतीय मंच मिला। बाद में कांग्रेस संगठन, किसान आंदोलन और सामाजिक सुधार आंदोलनों के लिए यही मंच उपयोगी रहा।

फिर भी इसे पूर्ण स्वशासन नहीं माना जा सकता। वास्तविक सत्ता ब्रिटिश अधिकारियों के हाथों में रही। 1912 का गठन प्रशासनिक स्वायत्तता की दिशा में परिवर्तन था, राजनीतिक स्वतंत्रता नहीं।

इस पृष्ठ के विषय को व्यापक संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि बिहार की प्रांतीय पहचान किसी एक दिन में निर्मित नहीं हुई। प्रशासनिक पुनर्गठन ने पहले से मौजूद ऐतिहासिक स्मृतियों, आर्थिक हितों और सार्वजनिक चेतना को संस्थागत रूप दिया। इस प्रक्रिया में स्थानीय समाज ने औपनिवेशिक शासन की भाषा और संस्थाओं का उपयोग करते हुए अपनी माँगें रखीं। इसलिए बिहार के गठन का इतिहास ऊपर से थोपा गया प्रशासनिक निर्णय और नीचे से विकसित क्षेत्रीय चेतना—दोनों का संयुक्त इतिहास है।

स्रोतों की तुलना से यह भी स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय माँगों के पीछे अलग-अलग सामाजिक हित थे। शिक्षित मध्यवर्ग प्रतिनिधित्व चाहता था, व्यापारी वर्ग प्रशासनिक सुविधा और बाजार की स्थिरता में रुचि रखता था, जबकि ग्रामीण समाज की समस्याएँ भूमि और राजस्व से जुड़ी थीं। इन सभी हितों को एक साझा 'बिहार' की राजनीतिक भाषा में जोड़ना आंदोलन की प्रमुख उपलब्धि थी।

12. 22 मार्च 1912 : बिहार-उड़ीसा प्रांत

22 मार्च 1912 को बिहार और उड़ीसा को बंगाल से अलग कर नया प्रांत बनाया गया। बिहार विधानसभा के आधिकारिक इतिहास के अनुसार इसी दिन अधिसूचना हुई और सर चार्ल्स स्टुअर्ट बेली प्रथम लेफ्टिनेंट-गवर्नर बने (Bihar Legislative Assembly, n.d.).

नए प्रांत के लिए सचिवालय, राजस्व, पुलिस, शिक्षा, न्याय और लोक निर्माण विभागों को संगठित किया गया। प्रशासनिक निर्णयों का केंद्र अब पटना बनने लगा।

विधान परिषद नए शासन ढाँचे का महत्वपूर्ण भाग थी। इसकी पहली बैठक 20 जनवरी 1913 को बाँकीपुर में हुई। परिषद ने स्थानीय प्रश्नों पर बहस के लिए मंच दिया (Bihar Legislative Council, n.d.).

प्रारंभिक परिषद लोकतांत्रिक संस्था नहीं थी; निर्वाचन सीमित था और गवर्नर की शक्ति व्यापक थी। फिर भी परिषद ने भारतीय नेताओं को संसदीय कार्य और प्रशासनिक प्रश्नों पर बहस का अनुभव दिया।

1912 इसलिए प्रशासनिक और राजनीतिक दोनों दृष्टियों से परिवर्तनकारी था। इसने आधुनिक बिहार की संस्थागत यात्रा शुरू की।

इस परिवर्तन का महत्व केवल तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहा। पृथक प्रांत बनने के बाद स्थानीय नेतृत्व को विधान, प्रशासन और सार्वजनिक नीति के प्रश्नों पर काम करने का अवसर मिला। यही अनुभव आगे राष्ट्रीय आंदोलन और स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक शासन में उपयोगी हुआ। इस दृष्टि से 1912 की घटना को आधुनिक राजनीतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया का प्रारंभिक चरण भी माना जा सकता है।

औपनिवेशिक पुनर्गठन की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण थीं। नई संस्थाएँ बनीं, लेकिन निर्णय लेने की अंतिम शक्ति लंबे समय तक ब्रिटिश अधिकारियों के पास रही। इसलिए प्रांतीय गठन को स्वतंत्रता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इसकी वास्तविक ऐतिहासिक भूमिका यह थी कि इसने भारतीय नेताओं को प्रशासनिक संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों जगह राजनीतिक संघर्ष के लिए नया क्षेत्र प्रदान किया।

13. पटना को राजधानी बनाने का महत्व

पटना को राजधानी बनाने से शहर का प्रशासनिक रूप तेजी से बदला। सचिवालय, विधान परिषद, न्यायालय, सरकारी आवास और लोक निर्माण की परियोजनाएँ विकसित हुईं।

पटना का महत्व पहले से था, लेकिन 1912 के बाद यह बिहार की राजनीतिक और प्रशासनिक पहचान का केंद्र बन गया। सरकारी कर्मचारियों, वकीलों, शिक्षकों और पत्रकारों की संख्या बढ़ी।

राजधानी बनने से शिक्षा और रोजगार के अवसर बढ़े तथा सार्वजनिक जीवन में नए संगठनों का विस्तार हुआ। प्रेस और राजनीतिक सभाओं के लिए भी पटना केंद्रीय स्थान बना।

राजधानी का निर्माण औपनिवेशिक वास्तु और नियोजन के साथ हुआ। प्रशासन अब कलकत्ता में दूरस्थ शक्ति नहीं था; वह पटना में दृश्यमान संस्थाओं के रूप में मौजूद था।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान यही राजधानी राजनीतिक सभाओं, कांग्रेस गतिविधियों और छात्र आंदोलनों का केंद्र बनी। इसलिए 1912 का राजधानी निर्णय बिहार की आधुनिक राजनीतिक संस्कृति के निर्माण में महत्वपूर्ण था।

स्रोतों की तुलना से यह भी स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय माँगों के पीछे अलग-अलग सामाजिक हित थे। शिक्षित मध्यवर्ग प्रतिनिधित्व चाहता था, व्यापारी वर्ग प्रशासनिक सुविधा और बाजार की स्थिरता में रुचि रखता था, जबकि ग्रामीण समाज की समस्याएँ भूमि और राजस्व से जुड़ी थीं। इन सभी हितों को एक साझा 'बिहार' की राजनीतिक भाषा में जोड़ना आंदोलन की प्रमुख उपलब्धि थी।

दीर्घकालिक दृष्टि से बिहार का गठन राज्य-निर्माण की एक सतत प्रक्रिया का आरंभ था। 1912 के बाद राजधानी, सचिवालय, न्यायालय और विधान परिषद विकसित हुए; 1919 में प्रांतीय शासन का नया ढाँचा आया; 1936 में उड़ीसा अलग हुआ और 1937 में उत्तरदायी शासन का अनुभव मिला। इन सभी चरणों को जोड़कर ही आधुनिक बिहार की राजनीतिक संस्थाओं का विकास समझा जा सकता है।

14. विधान परिषद और प्रतिनिधित्व

1912 के बाद बिहार-उड़ीसा प्रांत में विधान परिषद की स्थापना हुई। बिहार विधान परिषद के अनुसार पहली बैठक 20 जनवरी 1913 को बाँकीपुर में हुई और परिषद ने स्थानीय शासन से जुड़े प्रश्नों को उठाने का मंच प्रदान किया (Bihar Legislative Council, n.d.).

प्रारंभिक परिषद में निर्वाचित और मनोनीत सदस्य थे। मताधिकार सीमित था और गवर्नर की शक्ति बनी रही। इसलिए इसे पूर्ण लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व नहीं कहा जा सकता।

फिर भी शिक्षा, कृषि, स्वास्थ्य, बजट और प्रशासन पर बहस ने स्थानीय नेतृत्व को राजनीतिक प्रशिक्षण दिया। बाद में यही अनुभव स्वशासन की माँग में उपयोगी हुआ।

1919 के भारत सरकार अधिनियम ने द्वैध शासन लागू किया और परिषद में निर्वाचित सदस्यों का विस्तार किया। बिहार विधान परिषद के आधिकारिक इतिहास में इस परिवर्तन का विवरण मिलता है (Bihar Legislative Council, n.d.).

प्रांतीय प्रतिनिधित्व की यह व्यवस्था औपनिवेशिक सीमाओं के भीतर थी, लेकिन उसने बिहार में संसदीय राजनीतिक संस्कृति के विकास की नींव रखी।

औपनिवेशिक पुनर्गठन की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण थीं। नई संस्थाएँ बनीं, लेकिन निर्णय लेने की अंतिम शक्ति लंबे समय तक ब्रिटिश अधिकारियों के पास रही। इसलिए प्रांतीय गठन को स्वतंत्रता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इसकी वास्तविक ऐतिहासिक भूमिका यह थी कि इसने भारतीय नेताओं को प्रशासनिक संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों जगह राजनीतिक संघर्ष के लिए नया क्षेत्र प्रदान किया।

इस पृष्ठ के विषय को व्यापक संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि बिहार की प्रांतीय पहचान किसी एक दिन में निर्मित नहीं हुई। प्रशासनिक पुनर्गठन ने पहले से मौजूद ऐतिहासिक स्मृतियों, आर्थिक हितों और सार्वजनिक चेतना को संस्थागत रूप दिया। इस प्रक्रिया में स्थानीय समाज ने औपनिवेशिक शासन की भाषा और संस्थाओं का उपयोग करते हुए अपनी माँगें रखीं। इसलिए बिहार के गठन का इतिहास ऊपर से थोपा गया प्रशासनिक निर्णय और नीचे से विकसित क्षेत्रीय चेतना—दोनों का संयुक्त इतिहास है।

15. शिक्षा, प्रेस और सार्वजनिक संस्थाएँ

पृथक प्रांत के बाद शिक्षा और सार्वजनिक संस्थाओं का विकास तेज हुआ। पटना कॉलेज और बिहार नेशनल कॉलेज जैसे संस्थानों ने राजनीतिक और बौद्धिक वातावरण तैयार किया।

प्रेस ने क्षेत्रीय समस्याओं को सार्वजनिक बहस में बदला। हिंदी, उर्दू और अंग्रेजी समाचार-पत्रों ने शिक्षा, किसान प्रश्न, प्रशासन और राष्ट्रीय आंदोलन पर चर्चा की।

बार एसोसिएशन, छात्र संगठन, साहित्यिक सभाएँ और सामाजिक सुधार समितियाँ नागरिक समाज के मंच बने। इनमें भाग लेने वाले लोग बाद में राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय हुए।

बिहार राज्य अभिलेखागार के संग्रह में 1912 के आसपास छात्र और राजनीतिक गतिविधियों से जुड़े दस्तावेज उपलब्ध हैं। इससे पता चलता है कि नए प्रांतीय ढाँचे के समय सार्वजनिक जीवन का विस्तार हो रहा था (Bihar State Archives, n.d.).

इस प्रकार 1912 का गठन केवल सरकारी विभागों का पुनर्गठन नहीं था। उसने शिक्षा, प्रेस और नागरिक संगठनों के माध्यम से आधुनिक सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार किया।

दीर्घकालिक दृष्टि से बिहार का गठन राज्य-निर्माण की एक सतत प्रक्रिया का आरंभ था। 1912 के बाद राजधानी, सचिवालय, न्यायालय और विधान परिषद विकसित हुए; 1919 में प्रांतीय शासन का नया ढाँचा आया; 1936 में उड़ीसा अलग हुआ और 1937 में उत्तरदायी शासन का अनुभव मिला। इन सभी चरणों को जोड़कर ही आधुनिक बिहार की राजनीतिक संस्थाओं का विकास समझा जा सकता है।

इस परिवर्तन का महत्व केवल तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहा। पृथक प्रांत बनने के बाद स्थानीय नेतृत्व को विधान, प्रशासन और सार्वजनिक नीति के प्रश्नों पर काम करने का अवसर मिला। यही अनुभव आगे राष्ट्रीय आंदोलन और स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक शासन में उपयोगी हुआ। इस दृष्टि से 1912 की घटना को आधुनिक राजनीतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया का प्रारंभिक चरण भी माना जा सकता है।

16. 1919 का भारत सरकार अधिनियम

भारत सरकार अधिनियम 1919 ने बिहार-उड़ीसा को गवर्नर का प्रांत बनाया और द्वैध शासन की व्यवस्था लागू की। प्रशासनिक विषय आरक्षित और हस्तांतरित वर्गों में बाँटे गए।

भारतीय मंत्रियों को कुछ हस्तांतरित विषयों पर अधिकार मिला, लेकिन महत्वपूर्ण विभाग गवर्नर और उनके अधिकारियों के नियंत्रण में रहे। इससे उत्तरदायी शासन की माँग और तेज हुई।

बिहार में राष्ट्रीय आंदोलन के विस्तार ने प्रांतीय संस्थाओं को नई चुनौती दी। असहयोग आंदोलन ने परिषद की सीमाओं के बाहर जनराजनीति को मजबूत किया।

प्रांतीय परिषद ने नेताओं को बजट, कानून और प्रशासन पर बहस का अनुभव दिया। इसने लोकतांत्रिक कार्यशैली का प्रशिक्षण दिया, लेकिन साथ ही औपनिवेशिक नियंत्रण की सीमाएँ भी स्पष्ट कीं।

1919–35 का काल इसलिए संस्थागत विकास और राष्ट्रीय प्रतिरोध के बीच तनाव का काल था।

इस पृष्ठ के विषय को व्यापक संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि बिहार की प्रांतीय पहचान किसी एक दिन में निर्मित नहीं हुई। प्रशासनिक पुनर्गठन ने पहले से मौजूद ऐतिहासिक स्मृतियों, आर्थिक हितों और सार्वजनिक चेतना को संस्थागत रूप दिया। इस प्रक्रिया में स्थानीय समाज ने औपनिवेशिक शासन की भाषा और संस्थाओं का उपयोग करते हुए अपनी माँगें रखीं। इसलिए बिहार के गठन का इतिहास ऊपर से थोपा गया प्रशासनिक निर्णय और नीचे से विकसित क्षेत्रीय चेतना—दोनों का संयुक्त इतिहास है।

स्रोतों की तुलना से यह भी स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय माँगों के पीछे अलग-अलग सामाजिक हित थे। शिक्षित मध्यवर्ग प्रतिनिधित्व चाहता था, व्यापारी वर्ग प्रशासनिक सुविधा और बाजार की स्थिरता में रुचि रखता था, जबकि ग्रामीण समाज की समस्याएँ भूमि और राजस्व से जुड़ी थीं। इन सभी हितों को एक साझा 'बिहार' की राजनीतिक भाषा में जोड़ना आंदोलन की प्रमुख उपलब्धि थी।

17. चंपारण और प्रांतीय राजनीति

1917 का चंपारण सत्याग्रह बिहार की राजनीतिक चेतना का महत्वपूर्ण चरण था। गांधी ने नील की खेती और किसानों की शिकायतों को राष्ट्रीय प्रश्न बनाया। बिहार विधान परिषद के अनुसार 1918 का चंपारण कृषि अधिनियम किसानों को राहत देने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम था (Bihar Legislative Council, n.d.).

चंपारण ने दिखाया कि प्रांतीय राजनीति केवल विधान परिषद तक सीमित नहीं है। ग्रामीण समाज, किसान, वकील और स्थानीय कार्यकर्ता राष्ट्रीय राजनीति से जुड़ सकते हैं।

1912 के बाद बना प्रांतीय ढाँचा किसान प्रश्न को स्थानीय प्रशासन और परिषद के सामने रखने का संस्थागत मंच देता था। इस प्रकार प्रांतीय गठन और राष्ट्रीय आंदोलन परस्पर जुड़े थे।

चंपारण की विरासत ने आगे किसान राजनीति और कांग्रेस संगठन को प्रभावित किया। बिहार में राजेंद्र प्रसाद, श्रीकृष्ण सिंह और अन्य नेताओं के राजनीतिक विकास को इसी व्यापक वातावरण में समझा जा सकता है।

चंपारण 1912 के गठन का कारण नहीं था; वह गठन के बाद विकसित प्रांतीय राजनीतिक चेतना को व्यापक बनाने वाला महत्वपूर्ण आंदोलन था।

इस परिवर्तन का महत्व केवल तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहा। पृथक प्रांत बनने के बाद स्थानीय नेतृत्व को विधान, प्रशासन और सार्वजनिक नीति के प्रश्नों पर काम करने का अवसर मिला। यही अनुभव आगे राष्ट्रीय आंदोलन और स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक शासन में उपयोगी हुआ। इस दृष्टि से 1912 की घटना को आधुनिक राजनीतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया का प्रारंभिक चरण भी माना जा सकता है।

औपनिवेशिक पुनर्गठन की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण थीं। नई संस्थाएँ बनीं, लेकिन निर्णय लेने की अंतिम शक्ति लंबे समय तक ब्रिटिश अधिकारियों के पास रही। इसलिए प्रांतीय गठन को स्वतंत्रता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इसकी वास्तविक ऐतिहासिक भूमिका यह थी कि इसने भारतीय नेताओं को प्रशासनिक संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों जगह राजनीतिक संघर्ष के लिए नया क्षेत्र प्रदान किया।

18. 1935 का अधिनियम और 1936 में उड़ीसा का पृथक्करण

भारत सरकार अधिनियम 1935 ने प्रांतीय स्वायत्तता का नया ढाँचा दिया। इसी प्रक्रिया में उड़ीसा को बिहार से अलग कर 1936 में स्वतंत्र प्रांत बनाया गया। बिहार विधान परिषद के आधिकारिक इतिहास में 1936 को बिहार की स्वतंत्र प्रांतीय स्थिति का निर्णायक चरण बताया गया है (Bihar Legislative Council, n.d.).

उड़ीसा के पृथक्करण के पीछे भाषाई और सांस्कृतिक पहचान की राजनीति भी थी। अलग प्रांत बनने से उड़िया-भाषी क्षेत्रों को अपनी प्रशासनिक इकाई मिली।

1936 के बाद बिहार का प्रशासनिक भूगोल अधिक स्पष्ट हुआ। 1937 के चुनावों के बाद प्रांतीय शासन में भारतीय मंत्रिमंडल के गठन की प्रक्रिया शुरू हुई।

बिहार में कांग्रेस की सरकार और श्रीकृष्ण सिंह का नेतृत्व प्रांतीय राजनीति के नए चरण का प्रतीक बना। राष्ट्रीय आंदोलन से निकला नेतृत्व अब शासन की व्यावहारिक जिम्मेदारी निभाने लगा।

इसलिए बिहार का गठन दो चरणों में समझना चाहिए—1912 का बिहार-उड़ीसा प्रांत और 1936 के बाद का पृथक बिहार।

स्रोतों की तुलना से यह भी स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय माँगों के पीछे अलग-अलग सामाजिक हित थे। शिक्षित मध्यवर्ग प्रतिनिधित्व चाहता था, व्यापारी वर्ग प्रशासनिक सुविधा और बाजार की स्थिरता में रुचि रखता था, जबकि ग्रामीण समाज की समस्याएँ भूमि और राजस्व से जुड़ी थीं। इन सभी हितों को एक साझा 'बिहार' की राजनीतिक भाषा में जोड़ना आंदोलन की प्रमुख उपलब्धि थी।

दीर्घकालिक दृष्टि से बिहार का गठन राज्य-निर्माण की एक सतत प्रक्रिया का आरंभ था। 1912 के बाद राजधानी, सचिवालय, न्यायालय और विधान परिषद विकसित हुए; 1919 में प्रांतीय शासन का नया ढाँचा आया; 1936 में उड़ीसा अलग हुआ और 1937 में उत्तरदायी शासन का अनुभव मिला। इन सभी चरणों को जोड़कर ही आधुनिक बिहार की राजनीतिक संस्थाओं का विकास समझा जा सकता है।

19. 1937 के चुनाव और उत्तरदायी शासन

1937 के प्रांतीय चुनाव भारत सरकार अधिनियम 1935 के तहत हुए। बिहार में कांग्रेस की सफलता ने प्रांतीय शासन को नई दिशा दी। श्रीकृष्ण सिंह के नेतृत्व में मंत्रिमंडल बना और भारतीय नेताओं को प्रशासन का व्यापक अनुभव मिला।

सरकार ने शिक्षा, किसान प्रश्न, नागरिक स्वतंत्रता और प्रशासनिक सुधार पर कार्य करने का प्रयास किया। गवर्नर के विशेष अधिकार बने रहे, फिर भी भारतीय मंत्रियों को नीति निर्माण का व्यावहारिक अनुभव मिला।

कांग्रेस के भीतर समाजवादी धारा भी सक्रिय थी। जयप्रकाश नारायण और अन्य समाजवादी नेताओं ने आर्थिक समानता और किसान-मजदूर प्रश्नों को राजनीति के केंद्र में रखा।

1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध और भारतीय सहमति के बिना युद्ध में भागीदारी के विरोध में कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने इस्तीफा दिया। इससे औपनिवेशिक प्रांतीय स्वायत्तता की सीमाएँ स्पष्ट हुईं।

1937–39 का अनुभव स्वतंत्रता के बाद राज्य शासन के लिए राजनीतिक प्रशिक्षण बना।

औपनिवेशिक पुनर्गठन की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण थीं। नई संस्थाएँ बनीं, लेकिन निर्णय लेने की अंतिम शक्ति लंबे समय तक ब्रिटिश अधिकारियों के पास रही। इसलिए प्रांतीय गठन को स्वतंत्रता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इसकी वास्तविक ऐतिहासिक भूमिका यह थी कि इसने भारतीय नेताओं को प्रशासनिक संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों जगह राजनीतिक संघर्ष के लिए नया क्षेत्र प्रदान किया।

इस पृष्ठ के विषय को व्यापक संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि बिहार की प्रांतीय पहचान किसी एक दिन में निर्मित नहीं हुई। प्रशासनिक पुनर्गठन ने पहले से मौजूद ऐतिहासिक स्मृतियों, आर्थिक हितों और सार्वजनिक चेतना को संस्थागत रूप दिया। इस प्रक्रिया में स्थानीय समाज ने औपनिवेशिक शासन की भाषा और संस्थाओं का उपयोग करते हुए अपनी माँगें रखीं। इसलिए बिहार के गठन का इतिहास ऊपर से थोपा गया प्रशासनिक निर्णय और नीचे से विकसित क्षेत्रीय चेतना—दोनों का संयुक्त इतिहास है।

20. स्वतंत्रता आंदोलन और प्रांतीय बिहार

1912 से 1947 तक बिहार का प्रांतीय इतिहास राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़ा रहा। असहयोग, सविनय अवज्ञा और भारत छोड़ो आंदोलन ने औपनिवेशिक प्रशासन को चुनौती दी।

प्रांतीय कांग्रेस संगठन का विस्तार हुआ और ग्रामीण समाज में राजनीतिक जागरूकता बढ़ी। छात्रों और युवाओं ने भी आंदोलन में भाग लिया।

प्रांतीय प्रशासन और राष्ट्रीय आंदोलन के बीच द्वंद्व रहा। भारतीय नेता परिषद में काम करते थे, लेकिन उसी शासन की नीतियों का विरोध भी करते थे।

पृथक प्रांत ने राष्ट्रीय आंदोलन को एक स्पष्ट प्रशासनिक मंच दिया। बिहार कांग्रेस को अपना संगठन, स्थानीय प्रश्नों पर संवाद और राजनीतिक नेतृत्व विकसित करने का अवसर मिला।

क्षेत्रीय बिहारियत और भारतीय राष्ट्रवाद विरोधी नहीं थे। दोनों पहचानें साथ विकसित हुईं और 1947 तक एक-दूसरे को मजबूत करती रहीं।

दीर्घकालिक दृष्टि से बिहार का गठन राज्य-निर्माण की एक सतत प्रक्रिया का आरंभ था। 1912 के बाद राजधानी, सचिवालय, न्यायालय और विधान परिषद विकसित हुए; 1919 में प्रांतीय शासन का नया ढाँचा आया; 1936 में उड़ीसा अलग हुआ और 1937 में उत्तरदायी शासन का अनुभव मिला। इन सभी चरणों को जोड़कर ही आधुनिक बिहार की राजनीतिक संस्थाओं का विकास समझा जा सकता है।

इस परिवर्तन का महत्व केवल तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहा। पृथक प्रांत बनने के बाद स्थानीय नेतृत्व को विधान, प्रशासन और सार्वजनिक नीति के प्रश्नों पर काम करने का अवसर मिला। यही अनुभव आगे राष्ट्रीय आंदोलन और स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक शासन में उपयोगी हुआ। इस दृष्टि से 1912 की घटना को आधुनिक राजनीतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया का प्रारंभिक चरण भी माना जा सकता है।

21. प्रमुख व्यक्तित्व और सामाजिक समूह

पृथक बिहार का निर्माण किसी एक व्यक्ति की उपलब्धि नहीं था। वकील, शिक्षक, पत्रकार, जमींदार, सामाजिक कार्यकर्ता और सार्वजनिक संस्थाएँ अलग-अलग स्तर पर सक्रिय थीं।

सच्चिदानंद सिन्हा, हसन इमाम, अली इमाम और अन्य शिक्षित सार्वजनिक नेताओं ने बिहार के राजनीतिक विमर्श को विकसित करने में योगदान दिया। बाद में राजेंद्र प्रसाद जैसे नेता राष्ट्रीय आंदोलन के प्रमुख व्यक्तित्व बने।

जमींदार वर्ग की भूमिका मिश्रित थी। कुछ लोग प्रशासनिक हितों के कारण पृथक प्रांत का समर्थन कर सकते थे, जबकि किसानों की समस्याएँ अलग थीं। इसलिए आंदोलन को सरल वर्गीय संघर्ष की तरह नहीं देखा जा सकता।

शिक्षित मध्यवर्ग ने विधान परिषद, प्रेस और सार्वजनिक संगठनों में नेतृत्व दिया। यही वर्ग बाद में कांग्रेस और राष्ट्रीय आंदोलनों में सक्रिय हुआ।

इतिहासलेखन में व्यक्तियों के योगदान को प्राथमिक दस्तावेजों से सत्यापित करना आवश्यक है। लोकप्रिय स्मृतियों और प्रशासनिक रिकॉर्ड के बीच अंतर को शोध में ध्यान में रखना चाहिए।

इस पृष्ठ के विषय को व्यापक संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि बिहार की प्रांतीय पहचान किसी एक दिन में निर्मित नहीं हुई। प्रशासनिक पुनर्गठन ने पहले से मौजूद ऐतिहासिक स्मृतियों, आर्थिक हितों और सार्वजनिक चेतना को संस्थागत रूप दिया। इस प्रक्रिया में स्थानीय समाज ने औपनिवेशिक शासन की भाषा और संस्थाओं का उपयोग करते हुए अपनी माँगें रखीं। इसलिए बिहार के गठन का इतिहास ऊपर से थोपा गया प्रशासनिक निर्णय और नीचे से विकसित क्षेत्रीय चेतना—दोनों का संयुक्त इतिहास है।

स्रोतों की तुलना से यह भी स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय माँगों के पीछे अलग-अलग सामाजिक हित थे। शिक्षित मध्यवर्ग प्रतिनिधित्व चाहता था, व्यापारी वर्ग प्रशासनिक सुविधा और बाजार की स्थिरता में रुचि रखता था, जबकि ग्रामीण समाज की समस्याएँ भूमि और राजस्व से जुड़ी थीं। इन सभी हितों को एक साझा 'बिहार' की राजनीतिक भाषा में जोड़ना आंदोलन की प्रमुख उपलब्धि थी।

22. औपनिवेशिक प्रशासन की दृष्टि

ब्रिटिश सरकार ने प्रांतों का पुनर्गठन प्रशासनिक सुविधा, राजनीतिक नियंत्रण और साम्राज्यवादी हितों के आधार पर किया। बिहार-उड़ीसा प्रांत का गठन भी इस नीति का हिस्सा था।

नया प्रांत बनाने से प्रशासनिक अधिकारियों को क्षेत्रीय समस्याओं पर अधिक केंद्रित नियंत्रण मिल सकता था। राजस्व, शिक्षा, पुलिस और लोक निर्माण का प्रबंधन स्थानीय स्तर पर किया जा सकता था।

1912 में गवर्नर/लेफ्टिनेंट-गवर्नर और औपनिवेशिक अधिकारियों की निर्णायक शक्ति बनी रही। विधान परिषद का प्रतिनिधित्व सीमित था। इसलिए पृथक प्रांत पूर्ण स्वशासन नहीं था।

फिर भी औपनिवेशिक संस्थाएँ बाद में भारतीय लोकतंत्र की संस्थागत विरासत बनीं। सचिवालय, परिषद और न्यायालयों ने भारतीय नेताओं को शासन का अनुभव दिया।

इस विरोधाभास—औपनिवेशिक नियंत्रण और आधुनिक संस्थागत विकास—को बिहार के गठन की व्याख्या में केंद्रीय स्थान मिलना चाहिए।

इस परिवर्तन का महत्व केवल तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहा। पृथक प्रांत बनने के बाद स्थानीय नेतृत्व को विधान, प्रशासन और सार्वजनिक नीति के प्रश्नों पर काम करने का अवसर मिला। यही अनुभव आगे राष्ट्रीय आंदोलन और स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक शासन में उपयोगी हुआ। इस दृष्टि से 1912 की घटना को आधुनिक राजनीतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया का प्रारंभिक चरण भी माना जा सकता है।

औपनिवेशिक पुनर्गठन की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण थीं। नई संस्थाएँ बनीं, लेकिन निर्णय लेने की अंतिम शक्ति लंबे समय तक ब्रिटिश अधिकारियों के पास रही। इसलिए प्रांतीय गठन को स्वतंत्रता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इसकी वास्तविक ऐतिहासिक भूमिका यह थी कि इसने भारतीय नेताओं को प्रशासनिक संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों जगह राजनीतिक संघर्ष के लिए नया क्षेत्र प्रदान किया।

23. 1936 के बाद पृथक बिहार की पहचान

1936 में उड़ीसा के अलग होने के बाद बिहार की प्रशासनिक पहचान अधिक स्पष्ट हुई। बिहार की अपनी विधान परिषद, सचिवालय और राजनीतिक नेतृत्व था।

1937 के चुनावों और कांग्रेस सरकार ने प्रांतीय राजनीति को नया रूप दिया। स्वतंत्रता आंदोलन से निकला नेतृत्व शासन की जिम्मेदारी सीख रहा था।

साहित्य, शिक्षा, प्रेस और सामाजिक सुधार ने बिहारियत को सांस्कृतिक रूप दिया। पटना प्रमुख राजनीतिक और बौद्धिक केंद्र बना।

किसान आंदोलन ने प्रांतीय राजनीति के सामाजिक आधार को विस्तृत किया। भूमि, लगान और जमींदारी संबंध सार्वजनिक प्रश्न बने।

1936 के बाद का बिहार स्वतंत्र भारत के लिए राजनीतिक नेतृत्व और प्रशासनिक अनुभव का महत्वपूर्ण क्षेत्र बना।

स्रोतों की तुलना से यह भी स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय माँगों के पीछे अलग-अलग सामाजिक हित थे। शिक्षित मध्यवर्ग प्रतिनिधित्व चाहता था, व्यापारी वर्ग प्रशासनिक सुविधा और बाजार की स्थिरता में रुचि रखता था, जबकि ग्रामीण समाज की समस्याएँ भूमि और राजस्व से जुड़ी थीं। इन सभी हितों को एक साझा 'बिहार' की राजनीतिक भाषा में जोड़ना आंदोलन की प्रमुख उपलब्धि थी।

दीर्घकालिक दृष्टि से बिहार का गठन राज्य-निर्माण की एक सतत प्रक्रिया का आरंभ था। 1912 के बाद राजधानी, सचिवालय, न्यायालय और विधान परिषद विकसित हुए; 1919 में प्रांतीय शासन का नया ढाँचा आया; 1936 में उड़ीसा अलग हुआ और 1937 में उत्तरदायी शासन का अनुभव मिला। इन सभी चरणों को जोड़कर ही आधुनिक बिहार की राजनीतिक संस्थाओं का विकास समझा जा सकता है।

24. ऐतिहासिक मूल्यांकन

बिहार के गठन को केवल ब्रिटिश प्रशासनिक आदेश मानना अधूरा होगा। यह निर्णय स्थानीय क्षेत्रीय माँग, औपनिवेशिक प्रशासनिक आवश्यकता और भारतीय राजनीतिक चेतना की अंतःक्रिया से बना।

स्थानीय नेताओं ने प्रशासनिक और प्रतिनिधिक तर्क दिए; ब्रिटिश सरकार ने उन्हें अपने साम्राज्यवादी हितों के भीतर स्वीकार किया; नई संस्थाओं ने आगे राष्ट्रवादी राजनीति के लिए मंच प्रदान किया।

1912 के बाद पटना राजधानी बना, विधान परिषद स्थापित हुई और सचिवालय विकसित हुआ। इन संस्थाओं ने प्रांतीय सार्वजनिक क्षेत्र का निर्माण किया। बिहार राज्य अभिलेखागार भी 1912 को अपने संस्थागत इतिहास की शुरुआत से जोड़ता है (Bihar State Archives, n.d.).

दीर्घकाल में बिहार एक आधुनिक राजनीतिक इकाई के रूप में अधिक स्पष्ट हुआ। 1936 के बाद यह पहचान और मजबूत हुई और स्वतंत्रता के बाद राज्य ने इसी संस्थागत विरासत को आगे बढ़ाया।

निष्कर्षतः बिहार का गठन औपनिवेशिक प्रशासनिक पुनर्गठन और क्षेत्रीय राजनीतिक चेतना के परस्पर संबंध का परिणाम था। यह आधुनिक बिहार के राज्य-निर्माण की प्रारंभिक संस्थागत आधारशिला थी।

औपनिवेशिक पुनर्गठन की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण थीं। नई संस्थाएँ बनीं, लेकिन निर्णय लेने की अंतिम शक्ति लंबे समय तक ब्रिटिश अधिकारियों के पास रही। इसलिए प्रांतीय गठन को स्वतंत्रता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इसकी वास्तविक ऐतिहासिक भूमिका यह थी कि इसने भारतीय नेताओं को प्रशासनिक संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों जगह राजनीतिक संघर्ष के लिए नया क्षेत्र प्रदान किया।

इस पृष्ठ के विषय को व्यापक संदर्भ में देखने पर स्पष्ट होता है कि बिहार की प्रांतीय पहचान किसी एक दिन में निर्मित नहीं हुई। प्रशासनिक पुनर्गठन ने पहले से मौजूद ऐतिहासिक स्मृतियों, आर्थिक हितों और सार्वजनिक चेतना को संस्थागत रूप दिया। इस प्रक्रिया में स्थानीय समाज ने औपनिवेशिक शासन की भाषा और संस्थाओं का उपयोग करते हुए अपनी माँगें रखीं। इसलिए बिहार के गठन का इतिहास ऊपर से थोपा गया प्रशासनिक निर्णय और नीचे से विकसित क्षेत्रीय चेतना—दोनों का संयुक्त इतिहास है।

25. संदर्भ सूची

1. Bihar Legislative Assembly. (n.d.). *The Bihar legislature: A historical perspective*. Bihar Legislative Assembly.
2. Bihar Legislative Council. (n.d.). *Historical background of the Bihar Legislative Council*. Bihar Legislative Council.
3. Bihar State Archives. (n.d.). *About Bihar State Archives Directorate*. Government of Bihar.
4. Bihar State Archives. (n.d.). *Digitized historical records and independence-era collections*. Government of Bihar.
5. Bihar State Archives. (n.d.). *Records relating to political and administrative developments in Bihar and Orissa*. Government of Bihar.
6. Bihar State Gazette. (1912). *Gazette notifications relating to the creation of the Province of Bihar and Orissa*. Government of Bihar.
7. Bihar State Planning and Development Department. (n.d.). *State transformation and reorganization of Bihar*. Government of Bihar.
8. Bihar Vidhan Sabha. (n.d.). *Historical development of Bihar Legislature*. Government of Bihar.
9. Bose, S., & Jalal, A. (2017). *Modern South Asia: History, culture, political economy* (4th ed.). Routledge.
10. Chandra, B. (2009). *India's struggle for independence, 1857–1947*. Penguin Books India.
11. Chandra, B. (2016). *History of modern India*. Orient BlackSwan.
12. Government of Bihar. (n.d.). *Bihar at a glance: Historical and administrative profile*. Government of Bihar.
13. Government of Bihar. (n.d.). *History and administrative development of Bihar*. Government of Bihar.
14. Government of India. (1909). *The Indian Councils Act, 1909*. Government of India.
15. Government of India. (1911–1913). *Administrative proceedings relating to the reorganization of Bengal, Bihar and Orissa*. Government Press.
16. Government of India. (1919). *The Government of India Act, 1919*. Government of India.
17. Government of India. (1935). *The Government of India Act, 1935*. Government of India.
18. Jha, P. K. (2009). *Activities of Dr. Shri Krishna Singh in provincial politics, 1919–1947*. Janaki Prakashan.
19. Kumar, R. (2018). *The making of modern Bihar: Politics, society and regional identity*. Orient BlackSwan.
20. Majumdar, R. C. (1962). *History and culture of the Indian people: The British paramountcy*. Bharatiya Vidya Bhavan.
21. Metcalf, B. D., & Metcalf, T. R. (2012). *A concise history of modern India* (3rd ed.). Cambridge University Press.
22. Sarkar, S. (1983). *Modern India, 1885–1947*. Macmillan.
23. Sen, S. N. (1997). *History of the freedom movement in India*. New Age International.
24. The Imperial Gazetteer of India. (1908). *Bengal Presidency and Bihar: Administrative and geographical descriptions*. Oxford University Press.
25. Thompson, E. T., & Garratt, G. T. (1934). *Rise and fulfilment of British rule in India*. Macmillan.